Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

भारतीय गणित का सर्वप्रथम विकास और आधुनिक परिपेक्ष में विश्लेषण

डॉ. हीतेश्वर सिंह [भूतपूर्व गणित-विभाग, M L S M College, Darbhanga]
धनंजय कुमार मिश्रा [L N M U Darbhanga]

सार (Abstract)

गणित शब्द गण और प्रत्यय क्त से मिलकर बना है । जिसका मतलब गिनना होता है । भारत के पुराने निवासी आर्य धार्मिक सोच और विचार के लोग थे, उन्होंने धार्मिक विचार धारा को गणित से जोड़ा। भारतीय गणितज्ञ ने खगोलीय गणना का खोज किया, बाद में जिसको पूरे दुनिया ने अपनाया । बहुचर्चित नंबर पद्धति, शून्य और दशमलव भारतीय गणित और गणितज्ञों का बहुत ही महत्वपूर्ण देन है । बौदहायन प्रमेय, पायथागोरस प्रमेय से लगभग ५०० वर्ष पहले भारतीय गणितज्ञ बौदहायन द्वारा दिया गया। ग्रीक लोगों को चौथी सदी तक मैरायड($१०^{४}$) और रोमवासियों को पाँचवीं सदी तक मिली ($१०^{३}$) जैसी बड़ी संख्याओं का ही ज्ञान था, जबकि भारतीय गणितज्ञों और भारतीयों मुनियों को उससे कहीं काफी आगे संख्याओं का ज्ञान था। जैसे तलक्षणा - $१ ० ^{५३}$, महौघ – $१० ^{६०}$ एवं असंख्येय – $१० ^{१४०}$ जैसी बृहद संख्याओं का ज्ञान था। जब विश्व १००० जनता था तब, भारतवर्ष अनंत, ∞ खोजा। शून्य और अनंत का सांकेतिक चिन्ह ॐ से मिलता है। भारत में रेखागणित का शुरुआत यज्ञवेदिकाओं के विभिन्न आकारों, के मापन के आधार पर किया गया। मापन में शुल्ब इतनी महत्वपूर्ण थी कि, रेखागणित को शुल्ब शास्त्र कहा जाने लगा । इसप्रकार यह भी कहना गलत नहीं होगा कि, शुल्ब-गणित या शुल्ब-विज्ञान ही विश्व की रेखागणित का प्रथम रूप है। संचार, सूचना के अभाव में भारतीय गणित अपनी सही पहचान सही समय पर नहीं बना सकी और इसका श्रेय अन्य देशों ने ले लिया। केरलीय गणित सम्प्रदाय का प्रभाव दुनिया के खगोलीय अनुसंधान पर बहुत ही अधिक पड़ा। कलन शास्त्र, समाकलन का उपयोग खगोलीय अनुसंधान में केरलीय गणित सम्प्रदाय का प्रभाव बहुत ही प्रभावशाली था।

मुख्य शब्द- बौदहायन प्रमेय, शून्य और दाशमिक अंक प्रणाली, शुल्ब –सूत्र, पाई का मान, शून्य और अनंत, वैदिक गणित, समाकलन , खगोलीय गणित।

१.**प्रस्तावना (Introduction)**-गणित की व्यापाकता सतत और सार्वभौम है, नकारा नहीं जा सकता। गणित शास्त्र की परंपरा भारत में बहुत प्राचीन काल से रही है । गणित के महत्व को प्रतिपादित करने वाला एक श्लोक पुरानी काल से प्रचलित है। **यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा । तद्व द वेदां ग शास्त्राणां गनितं मूर्धनि स्थितम ॥** अर्थात जैसे मोरों में शिखा और नागों में मणि सबसे ऊपर रहती है, उसी प्रकार वेदांग और शास्त्रों में गणित सर्वोच्च स्थान पर स्थित है । गणित सांख्यिकी के रूप में आर्थशास्त्र, उच्चगणित के रूप में भौतिकी, प्राक्षेपणास्त्र के रूप में देश की सुरक्षा का साधन, ज्योतिष के रूप में इहलोक एवं परलोक के ज्ञान का साधन, त्रिकोणमिति

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

के रूप में व्योमगति का माध्यम, अंकगणित के रूप में समस्त लोक व्यवहार का प्राण, वास्तुशास्त्र के रूप में मापन का उपाय, तथा वाणिज्यशास्त्र के रूप में व्यापार का माध्यम आदि है। गणित शब्द का अर्थ गण् धातु से क्त प्रत्यय लगकर गिनना होता है। कौटिल्य के अनुसार "तस्माद्विक्रय्: पण्यानां घ्रितो मितो वा कार्य:" अर्थात वस्तुओं को नाप-तोल-गिन कर विक्रय करें । कौटिल्य ने ही बच्चों के लिए गणित का विधान किया है। प्राचीन काल में बालकों को गिनती सीखने के लिए गिनतारा नामक उपकरण का प्रयोग होता था। बालक को पटिया पर गणित सिखाने से यह पटिगणित के नाम से प्रसिद्ध हुआ। गणितशब्द वैदिक काल में अपने मूलरूप में नहीं पाया जाता है। फिर भी उसमें गण गणपती और गण्या शब्द ऋग्वेद में उपलब्ध हैं। गणित के अन्य नाम गणना, संख्यान, संखयशास्त्र, अंकविद्या, राशिविद्या, आदि साहित्य में वर्णित है। अवन्तरकाल में बापू देव शास्त्री ने अंकगणित पद प्रयोग करते हुए अंकगणित नामक एक पुस्तक लिखी। गणित विद्या के अभ्यास के लिए स्लेट का प्रथम प्रयोग भी उन्होंने ही किया। वैदिक्काल में गणित नक्षत्रविद्या के अंतर्गत स्वीकार किया था कारण धर्मपरायण आर्यजाति यज्ञ प्रेमी थे। यज्ञफल की प्राप्ति तभी संभव थी जब उसका अनुस्थान यथाकाल यथानक्षत्र किया जाए, यह गणना गणित द्वारा ही संभव थी। अतः ज्योतिष शस्त्र की आवश्यकता नुसार गणित का विकास हुआ, जिसमें ग्रह-गति गगना द्वारा तिथि-नक्षत्रओं-पर्वों का ठीक -ठीक ज्ञान हो सके। इस प्रकार यज्ञ रूप कारण से गणित का आविर्भाव हुआ और विश्व ने गणित का प्रथम पाठ भारतवर्ष से सीखा। धन्य है वह यज्ञ व्यवस्था जो आज केवल प्राचीन धार्मिक रूढ़ि के रूप मे जानी जाती है, किन्तु जिसने गणित को जन्म दिया, जिससे समस्त विज्ञान उत्पन्न हुए। व्यक्ति गणित अर्थात अंकगणित तथा अव्यक्ति गणित अर्थात बीजगणित के सम्यक अवलोकन से ज्ञात होता है कि यह उसी जाति के दिमाग की खोज है जो व्यक्त तथा अव्यक्त के चिंतन-मनन में सर्वदा रत रहती थी। ऋषियों ने जिस प्रकार व्यक्त लोक को उस परमात्मा रूप अव्यक्त अंश से उत्पन्न माना उसी प्रकार व्यक्त गणित के समस्त हिंदुओं के अव्यक्त गणित से उत्पन्न माना। जीवन प्रक्रिया में हमेशा गणित के अनेक उच्च स्तरीय सिद्धांत, जो हमारी सामान्य बुद्धि से बहुत परे हैं, और निरंतर कार्य कर रहे हैं। हम जितनी दूर तक संख्याओं की, रेखाओं की, बीजों की कल्पना कर सकते हैं उससे असंख्य गुणा अधिक इसका विस्तार इस विश्व को संचालित कर रहा है। जीवन का संचालन उत्पत्ति-स्थिति प्रलय के वैज्ञाननिक क्रम से होता है जिससे एक नियमित विज्ञान है। इस देश काला विच्छन्न विश्व को छानदस विज्ञान रूप गणित व्याप्त किए है। उस छानदस विज्ञान रूप गणित की उपलब्धि के लिए हमारा व्यवहार गणित प्रवृत्त होता है। छानदस विज्ञान के गणित में अक्षर काल की इकाइयों में विभक्त होकर, इस रूप में वे विभिन्न तत्वों के आश्रित होकर मात्रा और काल के परिमाण में जगत का संचालन करते हैं। यजुर्वेद में कहा गया है, अंकविद्या ही छंद है, छंद होने से वह अंकविद्या पूरे जगत में व्याप्त है। छंदों की गणना अक्षर-पाद-यति-विराम आदि पर अवलंबित है। भारतीय गणितज्ञ भास्कराचार्य ने ११५० ई० मे सिद्धांत शिरोमणि नामक ग्रंथ लिखा। इस महान ग्रंथ के चार भाग हैं । लीलावती, बीजगणित, गोलयाध्याय, ग्रह गणित । आजकल गणित को एक शुष्क विषय माना जाता है । लेकिन भास्कराचार्य का ग्रंथ

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

लीलावती गणित को आनंद के साथ मनोरंजन, जिज्ञासा आदि का समिश्रण करते हुए कैसे पढ़ाया जा सकता है इसका नमूना है। गणित का नोबेल पुरस्कार माने जाने वाला फील्ड्स मेडल पुरस्कार वर्ष २०१४ में भारतीय मूल के अमीरिकी गणितज्ञ मंजुल भार्गव को प्रदान किया गया। मंजुल भार्गव का भारतीय शास्त्रीय संगीत से बचपन से काफी लगाव रहा है। इन्होंने गणित और संगीत के संबंधों पर शोध पत्र प्रकाशित किया।

२. **अंकों और संख्याओं के क्षेत्र में योगदान**- गणित के क्षेत्र में भारत का इतिहास अति प्राचीन है अतः प्राच्यग्रन्थों में उसका उल्लेख स्वागविक है । वैदिक कालीन ग्रंथों जैसे वेदों , उपनिषदों , संहिताओं , आरणयकों , ब्राह्मणों में साथ ही उसके पश्चात पुराणों व रामायण , महाभारत आदि में सूक्ष्मतर एवं बृहत्तर संखियाओं का अति विकसित स्वरूप प्राप्त है। **मेधतिथि मुनि** ने संखियासुचक सारणी निम्न प्रकार से दी । एक -१ , दस – १ ० , शत – १ ०^{२} , सहस्र – १ ०^{३} , अयुत – १ ०^{४} नियुत – १ ०^{५} , प्रयुत – १ ०^{६} , अबुर्द – १ ०^{७} , ण्यबुर्द – १ ०^{८} , समुद्र – १ ०^{९} , मध्य – १ ०^{१०} , अंत – १ ०^{११} , और परार्द्ध – १ ०^{१२} । **तैत्तिरीय संहिता** में भी संखियाओं का सारणी बद्ध किया गया है। इसमे १ से १९ तक की संखयाएं , फिर १९, २९, ३९, ४९, ६९, ७९, ८९, ९९, पुनः विषम और सम संखयाएं साथ ही ४, ५,१०, २०, एवं १०० के गुणक की सारणी है । ई ० पू ० प्रथम शताब्दी के बौद्ध ग्रंथ **ललित विस्तार** में गणितज्ञ अर्जुन और महात्मा बोधिसत्त्व के संबादों में कोटि के बाद १०० पर आधारित संख्याओं की सूची दी गई है। जिसमें कोटि से तलक्षणा तक २४ संखियाओं की जानकारी मिलती है। ये सभी संखयाएं द्विगुणित , दशगुणित , और शतगुणित संख्या वाले अंकों की जानकारी देती है ।

जबकि ग्रीक लोगों को चौथी सदी तक (मैरायड) १ ०^{४} एवं रोम के लोगों को पाँचवी सदी तक (मिले) १०^{३} वाली ही अधिकतम संख्याओं का ज्ञान था। जबकि भारतीयों मुनियों को उससे कहीं काफी आगे संख्याओं का ज्ञान था। जैसे तलक्षणा - १ ०^{५३} , महौघ – १०^{६०} एवं असंख्येय – १०^{१४०} जैसी बृहद संख्याओं का ज्ञान था।
यह भी सोचने योग्य है कि, अंग्रेजी भाषा में जिस अंक माला को अरबी अंक कहते हैं, उसे भी अरब के लोग हिन्दसा अर्थात भारत से प्राप्त कहते हैं।

इस तरह हम कहेंगे कि, संख्याओं की विकास क्रम कुछ इस प्रकार होगी। **हिन्दी → अरबी → लैटिन → अंग्रेजी।** शून्य → सिफिर → जिफर → ज़ीरो।

भारतीय गणितज्ञ संख्याओं को विभाजित करके उनका सूक्ष्म प्रयोग करने में भी निपुण थे। उदाहरण स्वरूप अर्ध -१ , पाद -१ /४ , शफ -१ /८ , काष्ठा -१ /१२ , कला – १ /१६ इसप्रकार आदि।

यजुर्वेद में सम और विषम संख्याओं की निराली शृंखला का उल्लेख है । वायुपूराण के अनुसार शब्द अंक लेखन प्रणाली संख्यांक लेखन प्रणाली से आपेक्षाकृत प्राचीन है, कारण यह लिपि का आविष्कार ईसा पूर्व हो चुका था लेकिन संख्या बताने के लिए ईसा पश्चात भी रेखाओं का प्रयोग हो रहा था । निम्नलिखित आरी सीधी रेखाओं से ही संख्याओं की आकृति विकसित हुई । भारतीय संख्या पद्ध में लेखन और उच्चारण में शब्द अंक और संख्यांक में विपरीत गति है । अंकाना वमतो गतिः। अर्थात पञ्चदश -१ ५ , एकाशीतिः - ८ १ । शब्दांकलेख में इकाई का मान पूर्व में तथा अंकांक लेखन में उसे पश्चात लिखा जाता है। सामान्यत: बड़ी संख्याओं में दहाई का प्रयोग पूर्व में होता

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

है। उदाहरण के लिए – त्रीणि शतानि त्रिसहस्राणि त्रिंशत् च नव च ^{२०} – ३३३९ । वेदों में अनेक बार देवताओं और जगत को संचालित करने में सहायक अन्य तत्वों के माध्यम से संख्याओं को प्रस्तुत किया है। उदाहरण स्वरूप हम इस प्रकार देखते हैं । अग्निरेकाक्षरेण, अश्विनो द्वयक्षरेण, विष्णुस्त्रयक्षरेण, सोमचश्रतुरक्षेण, पूषा पञ्चाक्षरेण, सविता षडक्षरेण, मरुतः स्पताक्षरेण, बृहस्पतिरष्टाक्षरेण, मित्रों नवाक्षरेण, वरुणो दशाक्षरेण, इन्द्र एकादशाक्षरेण, विश्वेदेवा द्वादशाक्षरेण, वसवस्त्रयोदशाक्षरेण, रुद्राचश्रतुर्दशाक्षरेण, आदितया: पञ्चदशाक्षरेण, अदिति: षोडशाक्षरेण, प्रजापति: सप्तदशाक्षरेण। ये सभी सत्रह संख्याओं से जगत के निम्नलिखित पदार्थ की रचना का ज्ञान होता है । ये पदार्थ इसप्रकार हैं – प्राण , मनुष्य ,लोक ,वन्य पशु, दिशाएं,ऋतु, ग्राम्य पशु, छंदों एवं स्तोमों हैं। बहुत महत्वपूर्ण- अथर्ववेद के एक मंत्र में प्रस्तुत संख्याओं को विपरीत क्रम से लिखने पर आसानी से जगत की आयु ज्ञात की जा सकती है । शतं तेअयुतं हायनान द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्म:। इसका मतलब यह हुआ कि, जगत की आयु चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष माना गया है । यदि अकंओं के साथ अयुत को छोड़ कर केवल शतं पद को जोड़ा जाए तो कलियुग सर्वाधिक कम आयु का होगा। कलयुग की आयु **चार लाख बत्तीस हजार** माना गया है । इसप्रकार इस संख्या को एक, दो , तीन और चार से गुणा करने पर क्रमश: कलयुग, द्वापरयुग, त्रेतायुग और सतयुग की आयु प्राप्त होती है। आयभट्ट प्रथम ने ज्योतिषीय संख्याओं की गणना को स्वरों तथा व्यंजनों के साथ जोड़कर उक्त प्रकार की बड़ी संख्याओं को सूत्रों में करने की प्रणाली का आरंभ किया ।

३ शून्य और दाशमिक अंक प्रणाली का विकास- प्राचीन भारत की विश्व को सबसे महत्वपूर्ण देन –शून्य और दाशमिक अंक प्रणाली है। दुनिया में बुद्धि और सभ्यता के विकास में यह गणितीय योगदान अहम साबित हुआ। रोमन लिपि के संख्या चिन्ह के द्वारा एक सीमा तक ही संख्याओं को व्यक्त किया जा सकता था, क्योंकि बड़ी संख्याओं को व्यक्त करने में ये संख्या चिन्ह व्यावहारिक नहीं था। भारतीय गणितज्ञों ने ॐ की मुखाकृति के आधार पर अनंत ब्रह्म को पूर्णता के रूप में और शून्य की गोलाकृति की रचना की । इन्होंने १,२, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, और ० का खोज कर दाशमिक प्रणाली विकसित की, जिसमें प्रत्येक दसवां अंक एक नया पायदान होता है। उदाहरण के लिए – १०, २०, अथवा ५०१, ५००१, ५०००१ आदि संख्याओं को गुणित करने में शून्य का प्रयोग देखने में बहुत आसान लगता है, लेकिन ये एक आश्चरयोत्पादक है। उन्हे किसी भी संख्या को केवल दस बिंबों की सहायता से सरलता से तथा सुंदरतापूर्वक व्यक्त करने में सफलता मिली । हिन्दू संख्या अंकन पद्धति की इसी सुंदरता ने विश्व के सभ्य समाज को आकर्षित किया तथा उन्होंने इसे सहर्ष अपनाया। १ से ९ तक की अंकों तथा शून्य की सहायता से बड़ी से बड़ी राशि को आसानी से लिखा जा सकता है, अतः अन्य सभ्यताओं ने भी स्थानमान के इस सांकेतिक चिन्ह को अपनाया। भारत के साहित्य में सबसे पहले आचार्य पिंगल(२०० ई० पू०) के छन्द:शास्त्र में शून्य के

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

सांकेतिक प्रयोग मिलते हैं। इसमें छन्द के प्रस्तार के संबंध में इसप्रकार लिखा है – रूपे शून्यम अर्थात विषम संख्या से रूप अर्थात १ घटाने पर शून्य प्राप्त होता है, तथा द्वि शुन्ये अर्थात शून्य स्थान में दो बार आवृति किया जाए । इस प्रकार यह कहा जा सकता है की भारतीय साहित्य में शून्य के संकेत द्वितीय शताब्दी ई० पू० से मिलते तो हैं लेकिन इसका प्रथम पुरालिपिक प्रमाण नवीं सदी के अंत में मिलता है, जो सवसे पहले ग्वालियर में भोजदेव (८७० ई०) के अभिलेख से प्राप्त किया जा सकता है। चीन के एक विद्वान प्रो० निठम के अनुसार- शुंगकालीन गणितज्ञों (१०० ई० पू ०) के पास शून्य के चित्रित संकेत उपलब्ध थे। प्रो० गिनसबर्ग के अनुसार लगभग ७७० ई० सदी में उज्जैन के एक हिन्दू विद्वान कंक को बगदाद के प्रसिद्ध दरबार में अब्बा सईद खलीफा अल मंसूर ने आमंत्रित किया । इस तरह हिन्दू अंकन पद्धति अरब पहुंची । कंक ने हिन्दू ज्योतिष विज्ञान तथा गणित अरबी, विद्वानों को पढ़ाई। कंक की मदत से उन्होंने ब्रह्मपुत्र के ब्रह्म स्फुट सिद्धांत का अरबी अनुवाद किया गया। फ्रांसीसी विद्वान एम. एफ . नाऊ की ताजी खोज यह प्रमाणित करती है कि सातवीं सदी के मध्य में सीरिया में भारतीय अंक ज्ञात थे । भारतीय गणितज्ञ ब ब दत्त ने अपने प्रबंध में लिखा है कि, भारतीय अंक पद्धति अरबी मुल्क से मिश्र तथा उत्तरी अरब होते हुए ये धीरे धीरे पश्चिम में पहुँचा, तथा ग्यारहवीं सदी में पूर्ण रूप से यूरोप पहुँच गया । यूरोपियों ने उन्हें अरबी अंक कहा, क्योंकि उन्हें अरब से मिला था । लेकिन स्वयं अरबों ने एकमत से उन्हें हिन्दू अंक (**अंक – अरकान – अलहिन्द**) कहा । गणना के चिन्हों से हमें यह अनुभव होता है कि, प्राचीन हिंदुओं की बुद्धि बड़ी पैनी थी, यह उनके नौ अंकों और शून्य से प्रमाणित हो जाता है, कि जिनकी सहायता से कोई भी संख्या लिखी जा सकती है अथवा अनंत गांनाएं भी की जा सकती हैं। शून्य और अनंत गणित के दो अनमोल रत्न हैं, इनके बिना गणित कुछ भी नहीं है ।

४ भारत में रेखागणित का इतिहास और संचार, संपर्क और सूचना का अभाव का शिकार- भारत में रेखागणित का शुरुआत यज्ञवेदिकाओं के विभिन्न आकारों – गोल,वर्गाकार , आयताकार या अर्ध गोलाकार से हुआ। इन विभिन्न आकृति वाले वेदियों में श्येनचित वेदी का क्षेत्रफल निश्चित की जाती थी या फिर वेदियाँ उसी अनुपात में कम अथवा अधिक की जाती थी । इस प्रक्रिया में मापने की इकाई एक पुरुष थी जिसका अर्थ था कि यज्ञ कर्ता द्वारा अपने सिर के ऊपर हाथों को उठाने से जो लंबाई प्राप्त होती है । इस तरह वर्ग को आयात तथा आयात को वर्ग में बदलने और वर्ग को उसी क्षेत्रफल के वृत में बदलने हेतु रेखा गणित का सहारा लिया जाता था । इस प्रकार उन्होंने निस्कर्ष दिया कि, वर्ग का क्षेत्रफल भुजा का वर्ग करके तथा आयात का क्षेत्रफल लंबाई में चौड़ाई को गुण करके ज्ञात कर सकते हैं । यज्ञ वेदियों की भुजाओं की नाप के लिए शुल्ब अर्थात रज्जु का प्रयोग होता था। वेदिका मापन में शुल्ब इतनी महत्वपूर्ण थी कि, रेखागणित को शुल्ब शास्त्र कहा जाने लगा । इसप्रकार की ३० या ४० कदम लंबी रस्सियाँ महावेदी बनाने में

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

उपयोग की जाति थी। इनका निर्माण रज्जुदल नामक वृक्ष की छाल से किया जाता था। इसप्रकार शुल्ब गणित या शूलबविज्ञान ही विश्व की रेखागणित का प्रथम रूप था। शुल्ब –सूत्र में किसी त्रिकोण के क्षेत्रफल के बराबर क्षेत्रफल का वर्ग बनाना, वर्ग के क्षेत्रफल के बराबर वृत बनाना, वर्ग के दो गुने, तीन गुने, या एक तिहाई क्षेतफल के समान क्षेत्रफल का वृत बनाना आदि विधियां बताई गई है। भास्कराचार्य की लीलावती में यह गया है कि, किसी वृत में बने संकतुर्भुज ,षड्भुज ,पंचभुज,अष्टभूज आदि की एक भुजा उस वृत के व्यास के एक निश्चित अनुपात में होती है । किसी त्रिकोण का क्षेत्रफल उसकी भुजाओं से जानने की रीति चौथी शताब्दी के सूर्य सिद्धांत ग्रंथ में बताई गई है । जबकि इसका ज्ञान यूरोप को कलोबियस द्वारा सोलहवीं शताब्दी में हुआ । भास्कराचार्य की एक पुस्तक सिद्धांत शिरोमणि के चौथे खंड ग्रह –गणित में किसी ग्रह की तात्क्षणिक गति निकालने के लिए अवकलन का प्रोयग किया गया।

४(अ) एक आयत को उसी क्षेत्रफल के वर्ग में बदलने का नियम,बौदहायन का प्रमेय-आयत के विकर्ण उन दोनों क्षेत्रफल को बता सकते हैं जिन्हें लंबाई और चौड़ाई अलग–अलग मानेंगे । दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि एक आयत के विकर्ण पर बने वर्ग का क्षेत्रफल इसकी दोनों भुजाओं पर बने वर्गों के योग के बराबर होता है। इसी प्रमेय के बारे में लगभग ५०० वर्ष बाद पाइथागोरस ने बताया जिसे आज हम पाइथागोरस प्रमेय के रूप में जानते हैं, जो समकोण त्रिभुज पर आधारित है। त्रिकोणमिति का आधार बौदहयन का प्रमेय है । भारत में ज्या और कोटिज्या पश्चिम में जाकर साइन और कोसाइन हो गया। वास्तव में ज्या शब्द धनुष की डोरी से आया।

४(आ) **द्विघात समीकरण का हल निकालना**- आर्यभट्ट प्रथम-४ ७ ६ ई० ने एक द्विघात समीकरण का हल निकालकर बीजगणित की नींव रखी। यह विधि केवल श्लोकों की निर्माण में उपयोगी थी । अज्ञात राशियों द्वारा प्रतिपादित होने के कारण इसे अव्यक्त गणित कहा गया। बीजगणित दो प्रकार की राशियों से बनी। (१) व्यक्त गणित को १.....५ ,४ ,३ ,२ , आदि अंकगणितीय राशियाँ हैं (२) ,जबकि क ..... ग , ख ,आदि अव्यक्त राशियाँ हैं- जो मान निकालने से प्राप्त होता है यह स्वयं स्पष्ट नहीं होता है। भारतीय गणितज्ञ ब्राहमगुप्त-५९८ ई० ने इस अव्यक्त गणित को अधिक व्यवस्थित प्रयोग करने में सफल हुए । फिर दूसरे भारतीय गणितज्ञ भास्कर द्वितीय ने अव्यक्त संख्याओं की संकल्पना अधिक अच्छी तरीके से दिया। उन्होनें अव्यक्त राशियों को यावत, तावत ,कालक, नीलक, लोहितक जैसे शब्दों द्वारा व्यक्त किया।

६. त्रिभुज का क्षेत्रफल और **पाई का मान निकालना**- आर्यभट्ट ने त्रिभुज का क्षेत्रफल निकालने का सूत्र बनाया था। त्रिभुज का क्षेत्रपल उसके लंब तथा लंब के आधार वाली भुजा के आधे के गुणनफकल के बराबर होता है । पाई का मान आज से १५०० वर्ष पूर्व आर्यभट्ट ने निकाल था। आर्यभट्टीय-१० के अनुसार यदि एक वृत का व्यास २०००० है तो उसकी परिधि ६२२३२ होगी । जैसा की हम जानते हैं कि, किसी वृत के व्यास तथा उसकी परिधि के घेरे के प्रमाण

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

को पाई कहा जाता है। आर्यभट्ट के इस पाई का मान एकदम शुद्ध नहीं है, लेकिन काफी निकट है। इससे प्रमाणित होता है कि, वे सत्य के कितने आग्रही थे ।

७. **हड़प्पा काल में दशमलव प्रणाली का अस्तित्व-** भारत में दशमलव प्रणाली, हड़प्पाकाल में अस्तित्व में थी जैसा कि हड़प्पा के बाटों और मापों के विश्लेषण से पता चलता है। उस काल के 0.05, 0.1, 0.2, 0.5, 1, 2, 5, 10, 20, 50, 100, 200 और 500 के अनुपात वाले बाट पहचान में आये हैं। दशमलव विभाजन वाले पैमाने भी मिले हैं। हड़प्पा के बाट और माप की एक खास बात जिस पर ध्यान आकर्षित होता है, वह है उनकी शुद्धता। एक कांसे की छड़ जिस पर 0.367 इंच की इकाइयों में घाट बने हुए हैं, उस समय की बारीकी की मात्र की मांग की ओर इशारा करता है। ऐसे शुद्ध माप वाले पैमाने नगर आयोजन नियमों के अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए खास तौर पर महत्वपूर्ण थे क्योंकि एक दूसरे को समकोण पर काटती हुई निश्चित चैड़ाई की सड़कें तथा शुद्ध माप की निकास बनाने हेतु और विशेष निर्देशों के अनुसार भवन निर्माण के लिए उनका विशेष महत्व था। शुद्ध माप वाले बाटों की शृंखलाबद्ध प्रणाली का अस्तित्व हड़प्पा के समाज में व्यापार वाणिज्य में हुए विकास की ओर संकेत करता है।

८. **वैदिक काल में गणितीय गतिविधियां और प्रविधियाँ -** वैदिक काल में गणितीय गतिविधियों के अभिलेख वेदों में अधिकतर धार्मिक कर्मकांडों के साथ मिलते हैं। फिर भी, अन्य कई कृषि आधारित प्राचीन सभ्यताओं की तरह यहां भी अंकगणित और ज्यामिति का अध्ययन धर्मनिरपेक्ष क्रियाकलापों से भी प्रेरित था। इस प्रकार कुछ हद तक भारत में प्राचीन गणितीय उन्नतियां वैसे ही विकसित हुईं, जैसे मिस्त्र, बेबीलोन और चीन में। भू वितरण प्रणाली और कृषि कर के आकलन हेतु कृषि क्षेत्र को शुद्ध माप की आवश्यकता थी। जब जमीन का पुनर्वितरण होता था, उनकी चकबंदी होती थी, तो भू पैमाइश की समस्या आती ही थी जिसका समाधान जरूरी था और यह सुनिश्चित करने के लिए कि सिंचित और

असिंचित जमीन और उर्वरा शक्ति की भिन्नता को ध्यान में रखकर सभी खेतिहरों में जमीन का समतुल्य वितरण हो सके, इसलिये हर गांव के किसान की मिल्कियत को कई दर्जों में विभाजित किया जाता था ताकि जमीन का आबंटन न्यायपूर्ण हो सके। सारे चक एक ही आकार के हों, यह संभव नहीं था। अतः स्थानीय प्रशासकों को आयातकार या त्रिभुजाकार क्षेत्रों को समतुल्य परिमाण के वर्गाकार क्षेत्रों में परिणत करना पड़ता था या इसी प्रकार के और काम करने पड़ते थे। कर निर्धारण मौसमी या वार्षिक फसल की आय के निश्चित अनुपात पर आधारित था। मगर कई अन्य दशाओं को ध्यान में रखकर उन्हें कम या अधिक किया जा सकता था। इसका अर्थ था कि लगान वसूलने वाले प्रशासकों के लिए ज्यामिति और अंकगणित का ज्ञान जरूरी था। इस प्रकार गणित धर्म निरपेक्ष गतिविधि और कर्मकांड दोनों क्षेत्रों की सेवाओं में उपयोगी था।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

अंकगणितीय क्रियायें जैसे योग, घटाना, गुणन, भाग, वर्ग, घन और मूल नारद विष्णु पुराण में वर्णित हैं। इसके प्रणेता वेद व्यास माने जाते हैं, जो 1000 ई० पू० हुए थे। ज्यामिति /रेखा गणित/ विद्या के उदाहरण 800 ई० पू० में बौधायन के शुल्व सूत्र में और 600 ई० पू० के आपस्तम्ब सूत्र में मिलते हैं जो वैदिककाल में प्रयुक्त कर्मकाण्डीय बलि वेदी के निर्माण की तकनीक का वर्णन करते हैं। हो सकता है कि इन ग्रंथों ने पूर्वकाल में, संभवतया हरप्पाकाल में अर्जित ज्यामितीय ज्ञान का उपयोग किया हो। बौधायन सूत्र बुनियादी ज्यामितीय आकारों के बारे तथा एक ज्यामितीय आकार दूसरे समक्षेत्रीय आकार में या उसके अंश या उसके गुणित में परिणत करने की जानकारी प्रदर्शित करता है उदाहरण के लिए एक आयत को एक समक्षेत्रीय वर्ग के रूप में अथवा उसके अंश या गुणित में परिणत करने का तरीका। इन सूत्रों में से कुछ तो निकटतम मान तक ले जाते हैं और कुछ एकदम शुद्ध मान बतलाते हैं तथा कुछ हद तक व्यवहारिक सूक्ष्मता और बुनियादी ज्यामितीय सिद्धांतों की समझ प्रगट करते हैं। गुणन और योग के आधुनिक तरीके संभवतः शुल्व सूत्र वर्णित गुरों से ही उद्भूत हुए थे।

यूनानी गणितज्ञ और दार्शनिक पायथागोरस जो 6 वीं सदी ई० पू० में हुआ था उपनिषदों से परिचित था और उसने अपनी बुनियादी ज्यामिति शुल्व सूत्रों से ही सीखी थी। पायथागोरस के प्रमेय के नाम से प्रसिद्ध प्रमेय का पूर्ण विवरण बौधायन सूत्र में इस प्रकार मिलता हैः किसी वर्ग के विकर्ण पर बने हुए वर्ग का क्षेत्रफल उस वर्ग के क्षेत्रफल का दुगुना होता है। आयतों से संबंधित ऐसा ही एक परीक्षण भी उल्लेखनीय है। उसके सूत्र में एक अज्ञात राशि वाले एक रेखीय समीकरण का भी ज्यामितीय हल मिलता है। उसमें द्विघात समीकरण के उदाहरण भी हैं। आपस्तम्ब सूत्र जिसमें बौधायन सूत्र के विस्तार के साथ कई मौलिक योगदान भी हैं 2 का वर्गमूल बतलाता है जो दशमलव के बाद पांचवें स्थान तक शुद्ध है। आपस्तम्ब में वृत्त को एक वर्ग में घेरने, किसी रेखा खंड को सात बराबर भाग में बांटने और सामान्य रेखिक समीकरण का हल निकालने जैसे प्रश्नों पर भी विचार किया गया है। छटवीं सदी ई० पू० के जैन ग्रंथों जैसे सूर्य प्रज्ञाप्ति में दीर्घ वृत्त का विवरण दिया गया है। ये परिणाम कैसे निकाले गए इस विषय पर आधुनिक विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ का विश्वास है कि ये परिणाम अटकल विधि अथवा रूल आॅफ थंब अथवा कई उदाहरणों से प्राप्त नतीजों के साधारणीकरण से निकाले गए हैं। दूसरा मत यह है कि एकबार वैज्ञानिक विधि न्यायसूत्रों से निश्चित हो गई, ऐसे नतीजों के प्रमाण अवश्य दिए गए होंगे , मगर ये प्रमाण खो गए या नष्ट हो गए अथवा गुरुकुल प्रणाली के जरिये मौखिक रूप से उनका प्रसार हो गया और केवल अंतिम परिणाम ही ग्रंथों में सारिणीबद्ध हो गये। हर हाल में यह तो निश्चित है कि वैदिक काल में गणित के अध्ययन को काफी महत्व दिया जाता था। 1000 ई० पू० में रचित वेदांग ज्योतिष में लिखा है - जैसे मयूर पंख और नागमणि शरीर में शिखर स्थान या भाल पर शोभित होती है उसी प्रकार वेदों और शास्त्रों की सभी शाखाओं में गणित का स्थान शीर्ष पर है। कई शताब्दियों बाद मैसूर के

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

जैन गणितज्ञ महावीराचार्य ने गणित के महत्व पर और जोर देते हुए कहाः इस चलाचल जगत में जो भी वस्तु विद्यमान है वह बिना गणित के आधार के नहीं समझी जा सकती।

१० पाणिनि और विधि सम्मत वैज्ञानिक संकेत चिन्ह-

भारतीय विज्ञान के इतिहास में एक विशेष प्रगति, जिसका गंभीर प्रभाव सभी परवर्ती गणितीय ग्रंथों पर पड़ना था, संस्कृत व्याकरण और भाषाविज्ञान के प्रणेता पाणिनि द्वारा किया गया काम था। ध्वनिशास्त्र और संरचना विज्ञान पर एक विशद और वैज्ञानिक सिद्धांत पूरी व्याख्या के साथ प्रस्तुत करते हुए पाणिनि ने अपने संस्कृत व्याकरण के ग्रंथ अष्टाध्यायी में विधि सम्मत शब्द उत्पादन के नियम और परिभाषाएं प्रस्तुत कीं। बुनियादी तत्वों जैसे स्वर, व्यंजन, शब्दों के भेद जैसे संज्ञा और सर्वनाम आदि को वर्गीकृत किया गया। संयुक्त शब्दों और वाक्यों के विन्यास की श्रेणीबद्ध नियमों के जरिये उसी प्रकार व्याख्या की गई जैसे विधि सम्मत भाषा सिद्धांत में की जाती है।

आज पाणिनि के विन्यासों को किसी गणितीय क्रिया की आधुनिक परिभाषाओं की तुलना में भी देखा जा सकता है। जी . जी. जोसेफ दी क्रेस्ट ऑफ द पीकॉक में वर्णन किए हैं कि भारतीय गणित की बीजगणितीय प्रकृति संस्कृत भाषा की संरचना की परिणिती है। इंगरमेन ने शोध प्रबंध में पाणिनी बैकर्स फार्म में पाणिनी के संकेत चिन्हों को उतना ही प्रबल बताया है जितना कि बैकस के संकेत चिन्ह से हमे जानकारी प्राप्त होता है। आधुनिक कम्प्यूटर भाषाओं के वाक्यविन्यास का वर्णन करने के लिए व्यवहृत होता है जिसका अविष्कारकर्ता बैकस है। इस प्रकार पाणिनि के कार्यों ने वैज्ञानिक संकेत चिन्हों के प्रादर्श का एक उदाहरण प्रस्तुत किया जिसने बीजगणितीय समीकरणों को वर्णित करने और बीजगणितीय प्रमेयों और उनके फलों को एक वैज्ञानिक खाके में प्रस्तुत करने के लिए अमूर्त संकेत चिह्न प्रयोग में लाने के लिए प्रेरित किया होगा।

११ दर्शनशास्त्र सिद्धांतों और भारतीय गणित की परिकल्पना-

दार्शनिक सिद्धांतों का गणितीय परिकल्पनाओं और सूत्रीय पदों के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ा। विश्व के बारे में उपनिषदों के दृष्टिकोण की भांति जैन दर्शन में भी आकाश और समय असीम माने गये। इससे बहुत बड़ी संख्याओं और अपरिमित/irrational संख्ययओं की परिभाषाओं में गहरी रुचि पैदा हुई। पुनरावर्तन (recursive) सूत्रों के जरिये असीम संख्यायें बनाई गईं। अनुयोगद्वार सूत्र में ऐसा ही किया गया। जैन गणितज्ञों ने पांच प्रकार की असीम/अनंत संख्यायें बतलाईं :

- (१) एक दिशा में असीम/अनंत ,
- (२) दो दिशाओं में असीम/अनंत ,
- (३) क्षेत्र में असीम/अनंत ,
- (४) सर्वत्र असीम/अनंत , और
- (५) सतत असीम/अनंत।

तीसरी सदी ई०पू० में रचित भगवती सूत्र में और दूसरी सदी में ई ० पू ० में रचित स्थाननांग सूत्र में क्रमचय-संचय **(permutation combination)** को सूचीबद्ध किया गया है।

जैन समुच्चय सिद्धांत संभवतः जैन ज्ञान मीमांसा के स्यादवाद के समानान्तर ही उद्भूत हुआ जिसमें वास्तविक घातांक नियम के बारे में एक विचार देता है और इसे लघुगणक की संकल्पना विकसित करने के लिए उपयोग में लाता है। लॉग आधार 2, लाग आधार 3 और लाग आधार 4 के लिए क्रमशः अर्ध आछेद, त्रिक

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

आछेद और चतुराछेद जैसे शब्द प्रयुक्त किए गये हैं। षट्खण्डागम में कई समुच्चयों पर लागरिथमिक फंक्शन्स आधार 2 की क्रिया, उनका वर्ग निकालकर, उनका वर्गमूल निकालकर और सीमित या असीमित घात लगाकर की गई हैं। इन क्रियाओं को बार बार दुहराकर नये समुच्चय बनाये गये हैं। अन्य कृतियों में द्विपद प्रसार **(binomial expansion)** में आने वाले गुणकों का संयोजनों की संख्या से संबंध दिखाया गया है। चूंकि जैन ज्ञान मीमांसा में वास्तविकता का वर्णन करते समय कुछ अंश तक अनिश्चयता स्वीकार्य है। अतः अनिश्चयात्मक समीकरणों से जूझने में और अपरिमेय संख्याओं का निकटतम संख्यात्मक मान निकालने में वह संभवतया सहायक हुई।

बौद्ध साहित्य भी अनिश्चयात्मक और असीम संख्याओं के प्रति जागरूकता प्रदर्शित करता है। बौद्ध गणित का वर्गीकरण 'गणना' याने सरल गणित या 'सांख्यन' याने उच्चतर गणित में हुआ। संख्यायें तीन प्रकार की मानी गईं : सांखेय याने गिनने योग्य, असांखेय याने अगण्य और अनन्त याने असीम। अंक शून्य की परिकल्पना प्रस्तुत करने में, शून्य के संबंध में दार्शनिक विचारों ने मदद की होगी। ऐसा लगता है कि स्थानीय मान वाली सांख्यिक प्रणाली में सिफर याने बिन्दु का एक खाली स्थान में लिखने का चलन बहुत पहले से चल रहा होगा, पर शून्य की बीजगणितीय परिभाषा और गणितीय क्रिया से इसका संबंध 7 वीं सदी में ब्रह्मगुप्त के गणितीय ग्रंथों में ही देखने को मिलता है। विद्वानों में इस मसले पर मतभेद है कि शून्य के लिए संकेत चिन्ह भारत में कबसे प्रयुक्त होना शुरू हुआ। इफरा का दृढ़ विश्वास है कि शून्य का प्रयोग आर्यभट के समय में भी प्रचलित था। परंतु गुप्तकाल के अंतिम समय में शून्य का उपयोग बहुतायत से होने लगा था। 7 वीं और 11 वीं सदी के बीच में भारतीय अंक अपने आधुनिक रूप में विकसित हो चुके थे और विभिन्न गणितीय क्रियाओं को दर्शाने वाले संकेतों जैसे धन, ऋण, वर्गमूल आदि के साथ आधुनिक गणितीय संकेत चिन्हों के नींव के पत्थर बन गए।

१२ भारतीय दशमलव अंक प्रणाली अनोखी और सार्वभौमिक तथा सर्वमान्य -

यद्यपि चीन में भी दशमलव आधारित गणना पद्धति प्रयोग में थी, किन्तु उनकी संकेत प्रणाली भारतीय संकेत चिन्ह प्रणाली जितनी शुद्ध और सरल न थी और यह भारतीय संकेत प्रणाली ही थी जो अरबों के मार्फत पश्चिमी दुनियां में पहुंची और अब वह सार्वभौमिक रूप में स्वीकृत हो चुकी है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि हमारी दशमिक प्रणाली चीन से काफी उन्नत थी जो एक महत्वपूर्ण भारत की देन है। इस घटना में कई कारकों ने अपना योगदान दिया जिसका महत्व संभवतः सबसे अच्छे ढंग से फ्रांसीसी गणितज्ञ लाप्लेस ने बताया है। हर संभव संख्या को दस संकेतों के समुच्चय द्वारा व्यक्त करने की अनोखी विधि जिसमें हर संकेत का एक स्थानीय मान और एक परम मान हो, भारत में ही उद्भूत हुई। यह विधि आजकल इतनी सरल लगती है कि इसके गंभीर और प्रभावशाली महत्व पर ध्यान ही नहीं जाता। इसने अपनी सरल विधि द्वारा गणना को अत्यधिक आसान बना दिया और अंकगणित को उपयोगी अविष्कारों की श्रेणी में अग्रगण्य बना दिया।

यह अविष्कार प्रतिभाशाली तो था परंतु यह कोई अचानक नहीं हुआ था। पश्चिमी जगत में जटिल रोमन अंकीय प्रणाली एक बड़ी बाधा के रूप में प्रगट हुई और चीन की चित्रलिपि भी एक रुकावट थी। लेकिन भारत में ऐसे विकास के लिए सब कुछ अनुकूल था। दशमलव संख्याओं के प्रयोग का एक लम्बा और स्थापित इतिहास था ही, दार्शनिक और अंतरिक्षीय परिकल्पनाओं ने भी, संख्या सिद्धांत के

प्रति एक रचनात्मक विस्तृत दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया। पाणिनि के भाषा सिद्धांत और विधि सम्मत भाषा के अध्ययन और संकेतवाद तथा कला और वास्तुशास्त्र में प्रतिनिधित्वात्मक भाव के साथ साथ विवेकवादी सिद्धांत और न्याय सूत्रों की कठिन ज्ञान मीमांसा और स्याद्वाद तथा बौद्ध ज्ञान के नवीनतम भाव ने मिलकर इस अंक सिद्धांत को आगे बढ़ाने में मदद की।

१३. व्यापार और वाणिज्य का प्रभाव, नक्षत्र विद्या का महत्व में गणित का उपोग -

व्यापार और वाणिज्य में वृद्धि के फलस्वरूप, विशषरूप से ऋण लेने देने में, साधारण और चक्रवृद्धि ब्याज के ज्ञान की जरूरत पड़ी। संभवतः इसने अंकगणितीय और ज्यामितीय श्रेढियों में रुचि को उद्दीप्त किया। ब्रह्मगुप्त द्वारा ऋणात्मक संख्याओं को कर्ज के रूप में और धनात्मक संख्याओं को सम्पत्ति के रूप में वर्णित करना, व्यापार और गणित के बीच संबंध की ओर इशारा करता है। गणित, ज्योतिष का ज्ञान, विशेषकर ज्वारभाटे और नक्षत्रों का ज्ञान व्यापारी समुदायों के लिए बड़ा महत्व रखता था क्योंकि उन्हें रात में रेगिस्तानों

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

और महासागरों को पार करना पड़ता था। जातक कथाओं और कई अन्य लोक कथाओं में इनका बार बार जिक्र आना इसी बात का द्योतक है। वाणिज्य के लिए दूर जाने की इच्छा रखने वालों को अनिवार्य रूप से नक्षत्र विद्या में कुछ आधारभूत जानकारी लेनी पड़ती थी। इससे इस विद्या के शिक्षकों की संख्या काफी बढ़ी जिन्होंने बिहार के कुसुमपुर या मध्य भारत के उज्जैन अथवा अपेक्षाकृत छोटे स्थानीय केन्द्रों या गुरूकुलों में प्रशिक्षण प्राप्त किया। विद्वानों में गणित और नक्षत्र विद्या की पुस्तकों का विनिमय भी हुआ और इस ज्ञान का एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में प्रसार हुआ। लगभग हर भारतीय राज्य ने महान गणितज्ञों को जन्म दिया जिन्होंने कई सदियों पूर्व भारत के अन्य भाग में उत्पन्न गणितज्ञों की कृतियों की समीक्षा की। विज्ञान के संचार में संस्कृत ही जन माध्यम बनी थी।

बीज रोपण समय और फसलों का चुनाव निश्चित करने के लिए आवश्यक था कि जलवायु और वृष्टि की रूपरेखा की जानकारी बेहतर हो। इन आवश्यकताओं और शुद्ध पंचांग की आवश्यकता ने ज्योतिष विज्ञान के घोड़े को ऐड़ लगा दी। इसी समय धर्म और फलित ज्योतिष ने भी ज्योतिष विज्ञान में रुचि पैदा करने में योगदान दिया और इस अविवेकी प्रभाव का एक नकारात्मक नतीजा था, अपने समय से बहुत आगे चलने वाले वैज्ञानिक सिद्धांतों की अस्वीकृति। गुप्तकाल के एक बड़े **विज्ञानवेत्ता आर्यभट** ने जो 476 ई॰ में **बिहार के कुसुमपुर** में पैदा हुए थे। जिन्होंने अंतरिक्ष में ग्रहों की स्थिति के बारे में एक सुव्यवस्थित व्याख्या दी थी। पृथ्वी के अपने अक्ष पर घूर्णन के बारे में उनकी परिकल्पना सही थी तथा ग्रहों की कक्षा दीर्घवृताकार है उनका यह निष्कर्ष भी सही था। उन्होंने यह भी उचित ढंग से सिद्ध किया था कि चंद्रमा और अन्य ग्रह सूर्य प्रकाश के परावर्तन से प्रकाशित होते थे। उन्होंने सूर्य ग्रहण और चंद्र ग्रहण से संबंधित सभी अंधविश्वासों और पौराणिक मान्यताओं को नकारते हुए इन घटनाओं की उचित व्याख्या की थी। यद्यपि भास्कर प्रथम, जन्म 6वीं सदी, सौराष्ट्र में और अश्मक विज्ञान विद्यालय, निजामाबाद, आंध्र के विद्यार्थी, ने उनकी प्रतिभा को और उनके वैज्ञानिक योगदान के असीम महत्व को पहचाना। उनके बाद आने वाले कुछ ज्योतिषियों ने पृथ्वी को अचल मानते हुए, ग्रहणों के बारे में उनकी बौद्धिक व्याख्याओं को नकार दिया। लेकिन इन विपरीतताओं के होते हुए भी आर्यभट का गंभीर प्रभाव परवर्ती ज्योतिर्विदों और गणितज्ञों पर बना रहा जो उनके अनुयायी थे, विशेषकर अश्मक विद्यालय के विद्वानों पर।

सौरमंडल के संबंध में आर्यभट का क्रांतिकारी ज्ञान विकसित होने में गणित का योगदान जीवंत था। पाई का मान, पृथ्वी का घेरा /62832 मील /और सौर वर्ष की लंबाई आधुनिक गणना से 12 मिनट से कम अंतर और उनके द्वारा की गईं कुछ गणनायें थीं जो शुद्ध मान के काफी निकट थीं। इन गणनाओं के समय आर्यभट को कुछ ऐसे गणितीय प्रश्न हल करने पड़े जिन्हें बीजगणित और त्रिकोणमिति में भी पहले कभी नहीं किया गया था। आर्यभट के अधूरे कार्य को भास्कर प्रथम ने सम्हाला और ग्रहों के देशांतर, ग्रहों के परस्पर तथा प्रकाशमान नक्षत्रों से संबंध, ग्रहों का उदय और अस्त होना तथा चंद्रकला जैसे विषयों की विशद विवेचना की। इन अध्ययनों के लिए और अधिक विकसित गणित की आवश्यकता थी। अतः भास्कर ने आर्यभट द्वारा प्रणीत त्रिकोणमितीय समीकरणों को विस्तृत किया तथा आर्यभट की तरह इस सही निष्कर्ष पर पहुंचे कि पाइ एक अपरिमेय संख्या है। उसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान है ज्या फलन की गणना जो 11 प्रतिशत तक शुद्ध है। उन्होंने इंडिटर्मिनेट समीकरणों पर भी मौलिक कार्य किया जो उसके

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

पहले किसी ने नहीं किया और सर्वप्रथम ऐसे चतुर्भुजों की विवेचना की जिनकी चारों भुजायें असमान थीं और उनमें आमने सामने की भुजायें समानान्तर नहीं थीं।

ऐसा ही एक दूसरा महत्वपूर्ण ज्योतिर्विद गणितज्ञ वाराहमिहिर उज्जैन में 6 वीं सदी में हुआ था जिसने गणित ज्योतिष पर पूर्व लिखित पुस्तकों को एक साथ लिपिबद्ध किया और आर्यभट्ट के त्रिकोणमितीय सूत्रों का भंडार बढ़ाया। क्रमपरिवर्तन और संयोजन पर उसकी कृतियों ने जैन गणितज्ञों की इस विषय पर उपलब्धियों को परिपूर्ण किया और दबत मान निकालने की एक विधि दी जो अत्याधुनिक पास्कल के त्रिभुज के बहुत सदृश है। 7 वीं सदी में ब्रह्मगुप्त ने बीजगणित के मूल सिद्धांतों को सूचीबद्ध करने का महत्वपूर्ण काम किया। शून्य के बीजगणितीय गुणों की सूची बनाने के साथ साथ उसने ऋणात्मक संख्याओं के बीजगणितीय गुणों की भी सूची बनाई। क्वाड्रैटिक इनडिटरमिनेट समीकरणों का हल निकालने संबंधी उसके कार्य आयलर और लैग्रेंज के कार्यों का पूर्वाभास प्रदान करते हैं।

१४. कैलकुलस का आविर्भाव-

चंद्र ग्रहण का एक सटीक मानचित्र विकसित करने के दौरान आर्यभट को इनफाइनाटसिमल की परिकल्पना प्रस्तुत करना पड़ी, अर्थात् चंद्रमा की अति सूक्ष्मकालीन या लगभग तात्कालिक गति को समझने के लिए असीमित रूप से सूक्ष्म संख्याओं की परिकल्पना करके उन्होने उसे एक मौलिक अवकल समीकरण के रूप में प्रस्तुत किया। आर्यभट के समीकरणों की 10वीं सदी में मंजुल ने और 12वीं सदी में भास्कराचार्य ने विस्तार पूर्वक व्याख्या की। भास्कराचार्य ने ज्या फलन के अवकलज का मान निकाल। परवर्ती गणितज्ञों ने समाकलन की अपनी विलक्षण समझ का उपयोग करके वक्र तलों के क्षेत्रफल और वक्र तलों द्वारा घिरे आयतन का मान निकाला।

१५. व्यावहारिक गणित, व्यावहारिक प्रश्नों के हल-

इस काल में व्यावहारिक गणित में भी विकास हुआ - त्रिकोणमितीय सारिणी और माप की इकाइयां बनाई गईं। यतिबृषभ की कृति तिलोयपन्नति 6 वीं सदी में तैयार हुई जिसमें समय और दूरी की माप के लिए विभिन्न इकाइयां दीं गईं हैं और असीमित समय की माप की प्रणाली भी बताई गई है।

9वीं सदी में मैसूर के महावीराचार्य ने गणितसारसंग्रह लिखा जिसमें उन्होंने लघुत्तम समापवर्त्य निकालने के प्रचलित तरीके का वर्णन किया है। उन्होंने दीर्घवृत्त के अंदर निर्मित चतुर्भुज का क्षेत्रफल निकालने का सूत्र भी निकाला। इस पर ब्रह्मगुप्त ने भी काम किया था। इनडिटर्मिनेट समीकरणों का हल निकालने की समस्या पर भी 9वीं सदी में काफी रुचि दिखलाई दी। कई गणितज्ञों ने विभिन्न प्रकार के इंडिटर्मिनेट समीकरणों का हल निकालने और निकटतम मान निकालने के बारे में योगदान दिया।

9वीं सदी के उत्तरार्ध में श्रीधर ने जो संभवतया बंगाल के थे, नाना प्रकार के व्यवहारिक प्रश्नों जैसे अनुपात, विनिमय, साधारण ब्याज, मिश्रण, क्रय और विक्रय, गति की दर, वेतन और हौज भरना इत्यादि के लिए गणितीय सूत्र प्रदान किए। कुछ उदाहरणों में तो उनके हल काफी जटिल थे। उनका पाटीगणित एक विकसित गणितीय कृति के रूप में स्वीकृत है। इस पुस्तक के कुछ खंड में अंकगणितीय और ज्यामितीय श्रेढ़ियों का वर्णन है जिसमें भिन्नात्मक संख्याओं या पदों की श्रेणियां भी शामिल हैं तथा कुछ सीमित श्रेढ़ियों के योग के सूत्र भी हैं। गणितीय अनुसंधान की यह श्रृंखला 10 वीं सदी में बनारस के विजय नंदी तक चली आई जिनकी कृति करणतिलक का अलबरूनी ने अरबी में अनुवाद किया था। महाराष्ट्र के श्रीपति भी इस सदी के प्रमुख गणितज्ञों में से एक थे।

भास्कराचार्य 12वीं सदी के भारतीय गणित के पथ प्रदर्शक थे जो गणितज्ञों की एक लम्बी परंपरा के उत्तराधिकारी थे और उज्जैन स्थित वेधशाला के मुखिया थे। उन्होंने 'लीलावती' और 'बीजगणित' जैसी गणित की पुस्तकों की रचना की तथा 'सिद्धान्तशिरोमणि नामक ज्योतिषशास्त्र की पुस्तक लिखी। सर्व प्रथम उन्होंने ही इस तथ्य की पहचान की कि कुछ द्विघात समीकरणों की ऐसी श्रेणी भी हैं जिनके दो हल संभव हैं। इनडिटर्मिनेट समीकरणों को हल करने के लिए उनकी चक्रवाल विधि यूरोपीय विधियों से कई सदियों आगे थीं। अपने सिद्धांत शिरामणि में उन्होंने परिकल्पित किया कि पृथ्वी में गुरुत्वाकर्षण बल है। उन्होंने इनफाइनाइटसिमल गणनाओं और इंटीग्रेशन के क्षेत्र में विवेचना की। इस पुस्तक के दूसरे भाग में गोलक और उसके गुणों के अध्ययन तथा भूगोल में उनके उपयोग, ग्रहीय औसत गतियां, ग्रहों के उत्केंद्रीय अधिचक्र नमूना, ग्रहों का प्रथम दर्शन, मौसम, चंद्रकला आदि विषयों पर कई अध्याय हैं। उन्होने ज्योतिषीय यंत्रों और गोलकीय त्रिकोणमिति की भी विवेचना की है। उनके त्रिकोणमितीय समीकरण विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

१६. भारतीय गणित का प्रसार-

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

ऐसा विश्वास किया जाता है कि, इस्लामी हमलों की तीव्रता के बाद, जब भारतीय महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों का स्थान मदरसों ने ले लिया तब गणित के अध्ययन और शोध की गति काफी मंद पड़ गई। लेकिन यह भी महत्वपूर्ण बात है कि, यही समय था जब भारतीय गणित की पुस्तकें भारी संख्या में अरबी और फारसी भाषाओं में अनूदित हुईं, जिससे भारतीय गणित प्रसार अरबीयन मुल्कों में आरंभ हुआ। यद्यपि अरब विद्वान बेबीलोनीय, सीरियाई, ग्रीक और कुछ चीनी पुस्तकों सहित विविध स्रोतों पर निर्भर रहते थे, परंतु भारतीय गणित की पुस्तकों का योगदान विशेषरूप से महत्वपूर्ण था। 8वीं सदी में बगदाद के इब्न तारिक और अल फजरी, 9वीं सदी में बसरा के अल किंदी, 9वीं सदी में ही खीवा के अल ख्वारिज़्मी, 9वीं सदी में मगरिब के अल कायारवानी जो किताबबफी अल हिसाब अल हिन्दी के लेखक थे, 10 वीं सदी में दमिश्क के अल उक्लिदिसी जिन्होंने भारतीय गणित के अध्याय लिखी , इब्न सिना, 11 वीं सदी में ग्रेनेडा, स्पेन के इब्न अल सम्ह, 11वीं सदी में खुरासान, फारस के अल नसावी, 11वीं सदी में खीवा में जन्मे अल बरूनी जिनका देहांत अफगानिस्तान में हुआ, तेहरान के अल राजी, 11वीं सदी में कोर्डोवा के इब्न अल सफ्फर ये कुछ नाम हैं जिनकी वैज्ञानिक पुस्तकों का आधार अनूदित भारतीय ग्रंथ थे। कई प्रमाणों, अवधारणाओं और सूत्रों के भारतीय स्रोत के होने के अभिलेख परवर्ती सदियों में धूमिल पड़ गए लेकिन भारतीय गणित की शानदार अतिशय देन को कई मशहूर अरबी और फारसी विद्वानों ने मुक्त कंठ से स्वीकार किया है, विशेष रूप से स्पेन में। अब्बासी विद्वान अल गहेथ ने लिखाः भारत'' ज्ञान, विचार और अनुभूतियों का स्रोत है। ''956 ई० में अल मौदूदी ने जिसने पश्चिमी भारत का भ्रमण किया था, भारतीय विज्ञान की महत्ता के बारे में लिखा था। सईद अल अंदलूसी, 11वीं सदी का स्पेन का विद्वान और दरबारी इतिहासकार, भारतीय सभ्यता की जमकर तारीफ करने वालों में से एक था और उसने विज्ञान और गणित में भारत की उपलब्धियों पर विशेष टिप्पणी की थी। अंततः भारतीय बीजगणित और त्रिकोणमिति अनुवाद के एक चक्र से गुजरकर अरब दुनिया से स्पेन और सिसली पहुंची और वहां से सारे यूरोप में प्रविष्ट हुई। उसी समय ग्रीस और मिस्र की वैज्ञानिक कृतियों के अरबी और फारसी अनुवाद भारत में सुगमता से उपलब्ध हो गये।

१७. केरलीय गणित सम्प्रदाय, और समाकलन की खोज -

भारतीय गणित के सन्दर्भ में, १४वीं शताब्दी से लेकर १६वीं शताब्दी तक केरल क्षेत्र में एक के बाद एक अनेक महान गणितज्ञ एवं खगोलविद् हुए जिन्होंने गणित और खगोल के क्षेत्र में अत्यन्त उन्नत कार्य किया। इन्हीं को सम्मिलित रूप से केरलीय गणित सम्प्रदाय कहा जाता है। कालक्रम की दृष्टि से **संगमग्राम के माधवन** इस सम्प्रदाय के सबसे पहले योगदाता माने जाते हैं। माधवन के बाद कम से कम दो शताब्दियों तक यह सम्प्रदाय आगे बढ़ता रहा। परमेश्वर, नीलकण्ठ सोमयाजि, ज्येष्ठदेव, अच्युत पिशारती, मेलापतुर नारायण भट्टतिरि तथा अच्युत पान्निकर इसके अन्य सदस्य थे। **खगोलीय गणित** समस्याओं के समाधान के खोज के चक्कर में इस सम्प्रदाय ने स्वतंत्र रूप से अनेकों महत्वपूर्ण गणितीय संकल्पनाएँ सृजित की। इनमें त्रिकोणमितीय फलनों का श्रेणी के रूप में प्रसार सबसे महत्वपूर्ण है, जो नीलकंठ द्वारा रचित तंत्रसंग्रह नामक ग्रन्थ में मिलता है। ज्येष्ठदेव से हमें समाकलन का विचार मिला, जिसे संकलितम कहा गया था। **जैसा** कि इस संस्कृत कथन से समझ में आता है।

''एकाद्येकोथर पद संकलितं समं पदवर्गठिन्ते पकुति''

जो समाकलन को एक ऐसे चर में बदल देता है कि, चर के वर्ग के आधे के बराबर होगा, अर्थात $x\,dx$ का समाकलन $x^2/2$ के बराबर होगा। यह स्पष्ट रूप से समाकलन की शुरुआत है। इससे सम्बंधित एक अन्य परिणाम कहता है कि किसी वक्र के अन्दर का क्षेत्रफल उसके समाकल के बराबर होता है। इसमें से अधिकांश परिणाम यूरोप में ऐसे ही परिणामों के अस्तित्व से कई शताब्दियों पूर्व के हैं। अनेक दृष्टियों से, ज्येष्ठदेव का युक्तिभाष नामक ग्रन्थ **कलन** पर विश्व का पहला ग्रन्थ माना आ सकता है।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

केरल सम्प्रदाय ने खगोल विज्ञान में अन्य कई कार्य भी किये; वास्तव में खगोलीय परिकलनों पर विश्लेषण संबंधी परिणामों की तुलना में कहीं अधिक पृष्ठ लिखे गए हैं।

केरल स्कूल ने भाषाविज्ञान में भी योगदान दिया है, भाषा और गणित के मध्य सम्बन्ध एक प्राचीन भारतीय परंपरा है ; इसके सम्बन्ध में कात्यायन देखें। केरल की आयुर्वेदिक और काव्यमय परंपरा की जड़ें भी इस सम्प्रदाय में खोजी जा सकती हैं। प्रसिद्ध कविता, नारायणीयम, की रचना नारायण भात्ताथिरी द्वारा की गयी थी।

यद्यपि ऐसा लगता है कि इस्लामी फतह के बाद उत्तरी भारत के अधिकांश भागों में गणित में मौलिक कार्य रुक गये, बनारस गणित अध्ययन केंद्र के रूप में बचा रहा और केरल में गणित का एक महत्वपूर्ण स्कूल पल्लवित हुआ।

१४ वीं सदी में कोच्चि में **माधवन ने गणित** में महत्वपूर्ण अनुसंधान किए जिसे यूरोपीय गणितज्ञ कम से कम दो सदियों बाद ही जान पाये। उनके ज्या और कोज्या फलन के श्रेढी विस्तारण को जानने में न्यूटन को इसके बाद 300 वर्ष और लगे थे। गणित के इतिहासकार राजगोपाल, रंगाचारी और जोसेफ का मानना है कि गणित में उनकी देन इसे अगले सोपान पर आधुनिक शास्त्रीय विश्लेषण पर ले जाने में बहुत सहायक साबित हुई थी।

१५ वीं सदी में तिरुर , केरल के नीलकंठ ने माधव द्वारा प्राप्त परिणामों को विस्तृत किया और व्याख्या की।

नीलकंठ ने ग्रहीय सिद्धांत की व्याख्या को बाद में टाइको ब्राहे ने अपनाया। केरल के गणितज्ञओं द्वारा किए गए महत्वपूर्ण अनुसंधान में न्यूटन गौस्स का प्रक्षेप सूत्र , एक अनंत श्रेणी के योगफल का सूत्र और पाई का मान एक श्रेणी के रूप में शामिल है। **केरलीय गणित सम्प्रदाय का प्रभाव** दुनिया के खगोलीय अनुसंधान पर बहुत ही अधिक पड़ा। **कलन शास्त्र, समाकलन** का उपयोग खगोलीय अनुसंधान में **केरलीय गणित सम्प्रदाय का प्रभाव** बहुत ही प्रभावशाली था।

संदर्भ सूची-

१ गणितसार संग्रह -९ वीं सतब्दी , जैन गणितज्ञ, आचार्य महावीर

२ . अर्थशास्त्र

३ . वेदानगजयोतिष – आचार्य लगध , श्लोक सं ० ४

४ . वेदानगजयोतिष – आचार्य लगध , श्लोक सं ० ३

६ . बीजगणित , लीलावती , भास्कराचार्य।

७ . गणितसारसंग्रह , जैनगणितज्ञ , आचार्य महावीर।

८ . यजुर्वेद १५.४ , ५ ,१७.२, १८.२४-२५, ९.३१-३४।

९ . तैत्तिरीय संहिता-४.४०.११.४ तथा ७.२.२०.१

१० . ललित विस्तार, शिल्पसंदर्शन परिवर्तन।

११. छंद:शास्त्र , आचार्य पिंगल , ४.३.१७.२१, ८.२९,३०।

१२ . वायुपूरण -१०१.९३-१०३

१३ . आर्यभट्टीयम-गणितपाद ,२१

१४ .ऋग्वेद ५।.४०.५ ,४८.१६४.१ ,६.५२.१०,९.९.३,

१५.हेनरी टामस कोलब्रुक -- Algebra, with Arithmetic and mensuration, from the Sanskrit of Brahmegupta and Bháscara, १८१७

१६. बापूदेव शास्त्री

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(7), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

पण्डित सुधाकर द्विवेदी -- A History of Hindu mathematics (1910)

१७. बिभूतिभूषण दत्त (1888–1958) एवं अवधेश नारायण सिंह (1905-1954) -- हिन्दू गणित का इतिहास, १९३८

१८. कृपाशंकर शुक्ल (1918–2007 ; वटेश्वरसिद्धान्त का अंग्रेजी अनुवाद ; 'हिस्ट्री ऑफ हिन्दू मैथेमैटिक्स' का हिन्दी अनुवाद ((१९५६ ई०)

१९. प्रबोध चन्द्र सेनगुप्त १८७६, १९६२ - Ancient Indian Chronology ,१९४७

२०. प्रोफेसर समरेन्द्र नाथ सेन (१ अक्टूबर १९११८ (१३ अप्रैल १९९२ --Transmission of Scientific Ideas between India and Foreign Countries in Ancient and Medieval Times, Bull. Natl. Inst. Sc. Ind., 21, 8-30 (1963)

२१. सरस्वती अम्मा -- Geometry in Ancient and Medieval India (1979)

२२. डेविड पिंग्री (David Pingree) -- Census of the Exact Sciences in Sanskrit (5 vols., American Philosophical Society, Philadelphia 1970 et seq.)

२३. किम प्लॉफ्कर (Kim Leslie Plofker) -- Mathematics in India

२४. के० वी० वेंकटेश्वर शर्म - A history of the Kerala school of Hindu astronomy (in perspective) (1972)

२५. जॉर्ज घेवर्गीज जोसेफ - मोर का मुकुट : गणित के अयूरोपीय मूल , अनन्त की यात्रा : भारतीय केरल का मध्ययुगीन गणित तथा इसका प्रभाव (A Passage to Infinity : Medieval Indian Mathematics from Kerala and Its Impact), Indian Mathematics: Engaging With The World From Ancient To Modern Time

२६. आर श्रीधरन -- Mathematics in ancient India.

२७. टी के पुट्टास्वामी -- Mathematical Achievements of Pre-modern Indian Mathematicians.